परमधाम

श्री एस० पी० आर्य I. A. S. लखनऊ के सौजन्य से

साकार निराकार दोनों अविद्या (अज्ञान) की उपाधियाँ हैं। ब्रह्म के सगुण-निर्गुण वर्णन मिलने पर भी वह सभी उपाधियों से रहित है। पूर्ण ब्रह्म परमात्मा सगुण-निर्गुण, साकार, निराकार स्वरूप उपाधियों से परे है, वह अपने स्वयं सिद्ध सर्वातीत स्वरूप में नित्य एक रस अखण्ड विराजमान है और वही सबका उपास्य ब्रह्म है। परा नाम की विविध शक्तियाँ उसके लीलामय परमधाम में लीला वैचित्र्य की सिद्धि के लिए अपने-अपने स्वरूप में अनन्तरूप में दिखायी पड़तो हैं। इन सबकी अधिष्ठात्री श्यामा शक्ति है जो सदा एक रूप में एक रस शोभायमान है। यह शक्ति नित्य परमात्मा के साथ है इसी से परमात्मा शक्तिमान् कहा जाता है।

शक्ति और शक्तिमान् का कभी भेद नहीं माना जाता। अतः शक्ति सहित होने से उसे युगल स्वरूप माना गया है। यह युगल स्वरूप लौकिक द्वैत से भिन्न, विचित्र एवं विलक्षण है। यह युगल भाव नित्य है। एक होकर भी पृथक-पृथक प्रतीत होता है। ब्रह्म के एक भाव का परित्याग करने पर दूसरे भाव के अस्तित्व पर विश्वास नहीं होता। पदार्थ और उसकी शक्ति, सूर्य और उसका तेज, चन्द्रमा और उसकी चाँदनी, शब्द और अर्थ, जल और तरङ्ग में नित्य युगलभाव विद्यमान है वैसे ही ब्रह्म में विलक्षण युगल भाव हैं। यह परमात्मा ही सबका स्वामी है, सभी प्राणियों का राजा है। शक्ति युक्त होने से इसे 'राजश्यामा' भी कहते हैं।

ब्रह्मधाम के पूर्णात्पूर्ण होने से वहाँ सब कुछ उपस्थित रहता है। सर्वसामग्री युक्त होने से वहाँ कोई नवीन भाव नहीं उत्पन्न होते। वहाँ के सभी पदार्थ नित्य, चेतन, सत्य-सनातन, स्वयं सिद्ध, दिव्य स्वरूप, ज्ञान-पूर्ण, सच्चिदानन्द मय, पृथक-पृथक होते हुए भी भेदरहित, अद्वैत भाव पूर्ण शोभायमान हैं। स्थिति और गति, भोग्य और भोक्ता, साधन और सिद्धि, कामना और प्राप्ति, दूर और समीप, थोड़ा और बहुत, एक और अनेक भावों की कल्पना और भेद तो संकीर्ण विश्व के चेतन में है, ब्रह्म धाम की पूर्णता से वहाँ इन भावों का होना उठना सम्भव ही नहीं है।

ब्रह्म की लीला आनन्दमयी है और आनन्द लीलामय है। आनन्द रूपी सम्पूर्ण सामग्री अखण्ड और सुखप्रद है। सभी भाव ब्रह्म रूप है। सम्पूर्ण ब्रह्मधाम ब्रह्ममय एक होते हुए भी विविध लीलामय रूप में भासता है। ब्रह्म ही द्रवीभूत और घनीभूत होकर भोग्य और भोक्ता स्वरूप में सर्वत्र फैला है।

परमात्मा पूर्णात्पूर्ण होने से पूर्णावस्था (युवावस्था) सम्पन्न है अतः युगल किशोर है। आनन्द स्वरूप होने से लीलायुक्त है और इसलिए रसमय है। वह रसघन है अतः रस देने वाला है। वह

Nijanand App

ब्रह्मानन्द से पूर्ण है अतः सबको पूर्ण किये रहता है वह अमृत स्वरूप है अतः उसकी सम्पूर्ण लीला अविनाशी है। वह भूमा है। परमधाम में सभी युवा है, बालक या वृद्ध नहीं।

दीपक की ज्योति और प्रकाश अलग नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा होता तो ज्योति के हटने से प्रकाश न हटता। ज्योति और प्रकाश एक स्वरूप भी नहीं कहा जा सकता। दीप ज्योति के हाथ में लगने से हाथ जल जाता है किन्तु प्रकाश हाथ पर पड़ने पर कुछ नहीं होता। अतः इन्हें अभेद (एक) कहना भी उचित नहीं। भेद की प्रतीत तथा अभेद के विद्यमान (भेद सहिष्णु अभेद) होने को 'तादात्म्य सम्बन्ध' कहते हैं। ब्रह्म धाम की ऐसी ही विचित्रता है। लीलामय पदार्थ अलग-अलग विद्यमान रहते हुए भी ब्रह्म स्वरूप होने से एक स्वरूप है। ब्रह्मतत्व के शब्दातीत होने से भेद-अभेद दोनों कल्पनाओं से परे होना भी कहते नहीं बनता। अद्वैत भूमिका का चेतन पदार्थों में भेद की कल्पना असंगत और मिथ्या है।

परमतत्व (ब्रह्मस्वरूप) का ज्ञान तपस्या, अधिक पूजा पाठ, संन्यास-धारण, वेदाध्ययन, जल अग्नि, सूर्योपासना आदि से प्राप्त नहीं होता। यह ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों के चरण धूलि सेवन से उपलब्ध होता है।

उल्लू पक्षी को प्रकाश पुञ्ज सूर्य भी अन्धकारमय प्रतीत होता है। स्वप्रकाश पूर्णब्रह्मानन्द का वर्णन सुन अनाधिकारी को भी कुछ ऐसे ही भासने लगता है। दुर्बलता के कारण वह परमतत्व को ग्रहण नहीं कर पाता। श्वान अपने समक्ष रखे दर्पण में स्वयं को देख विरोधी समझ भौंकने लगता है। अपात्र पुरुष के हृदय के संस्कारों की हीनता और विचारों की दुर्बलता भ्रम के कारण बन जाते हैं। विरोधी मत स्थिर करने में व्यस्त व्यक्ति ब्रह्मज्ञान से वंचित रह जाता है।

परब्रह्म के अंग-प्रत्यंग नित्य होने से सापेक्ष नहीं हैं और हमारे शरीर के समान भोजन, अन्न, पान आदि की अपेक्षा नहीं रखते। प्रकृतिजन्य दोष वहाँ उपस्थित नहीं होते और वह हाँड़, माँस, मज्जा, रक्त आदि से रहित हैं। वह आनन्दस्वरूप सर्वत्र भेदरहित, चेतन, स्वयं-सिद्ध, दिव्यस्वरूप हैं। वह पुरुष-स्वरूप है।

परब्रह्म की इच्छा मात्र से पदार्थ उपस्थित हुआ, और पूर्ण होते ही पदार्थ तिरोहित हो गया। इस प्रकार आविर्भाव-तिरोभाव की लीला वहाँ होती रहती है। वह सत्य भूमिका है अतः संकल्प नहीं उठते, वहाँ कोई वस्तु घटती-बढ़ती नहीं, सभी एकरस हैं।

मूल मन्दिर के चारों ओर ६-६ हजार मंदिरों (प्रकोष्ठों) की दो पंक्तियाँ (हार) हैं। भीतर की ओर और भी गोल चौकोर (चौरस) के चारों ओर कितनी ही पंक्तियाँ हैं। पहला एक गोल मन्दिर जो मुख्य प्रवेश द्वार के सामने है और चौंसठ स्तम्भों की दो पंक्तियों [हारों] से घिरा है 'मूल-मिलावा' कहा जाता है। इसके बीच में चमकते हुए सोने के रंग का रत्नों से जड़ा हुआ एक सिंहासन है। इस पर विराजमान, युगलस्वरूप श्री राजश्यामाजी [पूर्णब्रह्म परमात्मा] इस जगत के मोहमाया के रहस्य को ब्रह्मसृष्टियों को [शाश्वती समा] दृष्टिगोचर करा रहे हैं। सिंहासन के

चारों ओर शक्ति समूह अपने-अपने स्थान पर विराजमान इस कौतुक को देखने के उत्सुक हैं। परब्रह्म के विराजने के स्थान की शोभा और उपमा शब्दातीत अप्राकृत एवं अनादि होने से मन-वाणी से परे, वर्णन में नहीं आती।

प्रथम भूमिका अत्यन्त शोभापूर्ण 'आधार-भूमिका' कही जाती है। दूसरी भूमिका में मूल-मन्दिर के प्रवेश द्वार से दाहिनी तरफ चौरस 'षोडश-वेश्म' दर्पण सदृश बने हैं और जिनमें नीचे ऊपर सर्वत्र सबका प्रतिबिम्ब अनन्त रूप से दृष्टि-गोचर होता है, अतः इसे 'मति-विभ्रमा' भी कहा जाता है। मूल मन्दिर में मुख्य प्रवेश द्वार के ऊपर तीसरी भूमिका में एक बड़ी बैठक है जो छज्जा और मूल मन्दिर की दीवाल का कुछ स्थान लेकर सुशोभित है। इसे 'पड़साल' कहते हैं। वहां प्रातः से लेकर तीन प्रहर तक श्री ब्रह्मपूर्ण परमात्मा तथा शक्ति समूह सुन्दर साथ अनेक प्रकार के आनन्द लेते हैं। यहीं पर वह ब्रह्मधाम के पशु-पक्षियों को दर्शन देते हैं। अक्षर ब्रह्म भी यहाँ नित्य ही श्री पूर्णब्रह्म के दर्शन करने आते हैं। यहाँ सुन्दर साथ और मूल स्वरूप के बीच परस्पर प्रेम संवाद होता है। नाना पदार्थों के आरोगने की लीला भी यहाँ होती है। इसे 'संवाद-भूमिका' अथवा 'भोग-भूमिका' भी कहते हैं।

चौथी भूमिका पर चौरस हवेली में एक प्रहर रात्रि तक नाना प्रकार के नृत्य, गान, कला, राग-रागिनी के आनन्द का उदय रहता है, अतः इसे 'नृत्यमयो भूमिका' कहते हैं। पाँचवीं भूमिका मूल-मन्दिर के मध्य में प्रवाली रंग के मन्दिर में शयन लीला का स्थान हैं। तमोरूप निद्रा का यहाँ अभाव है, पूर्णत्पूर्ण चिदघन ज्ञान और आनन्द की स्फूर्ति के कारण नित्य जाग्रदवस्था है। यह शयन श्रम दूर करने के लिए निद्रा सापेक्ष नहीं है, अपितु यह ब्रह्मानन्दपूर्ण है और इसमें मुक्त दशा के आनन्द का अनुभव है। इसे 'मुक्ति-भूमिका' भी कहते हैं।

छठी भूमिका में दहलान हैं। यहाँ विमान और सुखपालों के स्थान हैं। यहाँ से इच्छानुसार मन की तेजी से चलने वाले विमानों पर बैठकर वन उपवन का आनन्द लेने जाते हैं। इसे 'विमान भूमिका' भी कहते हैं। सातवी भूमिका में झूलने की लीला का आनन्द है। नाना प्रकार विचित्र हिंडोलों पर आमने-सामने ताली दे देकर झूलते हैं। इसे 'हिंडोला भूमिका' कहते हैं। आठवी भूमिका में चार-चार हिंडोलों की ताली पड़ती है। सातवीं में दो दो हिंडोलों की ताली पड़ती है मूल मन्दिर के नवें उच्च भाग में चारों ओर विशाल दिव्य छज्जे हैं। इन पर सब ओर भाँति-भाँति के सिंहासन और अनेक प्रकार के चित्र-विचित्र रत्न जड़ी हुई कुर्सियाँ (बैठकें) पड़ी हैं।

दसवीं भूमिका मूल मन्दिर (पुण्डरीक वेश्म) की ऊपरी खुली छत है। यहाँ भाँति-भाँति के पुष्प विकसित हैं। फुलवारियों के बीच-बीच में अनेक अमृत कुण्ड, नहर तथा फव्वारों से युक्त चबूतरे हैं जहाँ पर बीच में सिंहासन, बैठक, कुर्सी आदि शोभित हैं। इन पर बैठकर युगल स्वरूप तथा सुन्दर साथ आकाशीय दृश्यों का आनन्द लेते हैं। इस भूमिका से परमधाम के २५ पक्षों का कौतूहल-पूर्वक निरीक्षण होता है। पूर्व में यमुनाजी, उनके दोनों तट, सात-सात घाट और सात-सात वन, अक्षर ब्रह्म का धाम और आगे कुञ्ज-निकुञ्ज वन के आनन्द का दृश्य उपस्थित होता है। उससे आगे

Nijanand App

रत्न जड़ी दोनों तटबद्ध जल धाराएँ (जवेरों की नहर) देखने में आती है। उनके आगे वन की नहर, छोटा आवरण तथा वृहद् दुर्ग भित्ति (बड़ा आवरण) आनन्द विभोर करने वाला अनुपम दृश्य उपस्थित होता है। आग्नेय कोण में कुञ्ज-निकुञ्ज वन जवेरों की नहरें, छोटा आवरण, अमृत सागर (नूर सागर) बड़े दुर्ग की शोभा और महल मन्दिर हैं।

दक्षिण दिशा में बट-पोपल की चौकी, कुञ्ज-निकुञ्ज वन, सुधासर (हौज-कौसरताल), चौबीस पाँखुरी के भवन (हांस के महलात), माणिक गिरि जवेरों की नहरें, वन की नहरें, चक्रावृत्त धाराएँ (फव्वारे), छोटा आवरण, नीर सागर महल मन्दिर हैं।

नैऋत्य कोण में वृक्ष पंक्ति (पाँच पेड़ों की पंक्ति कुञ्ज-निकुञ्ज वन, बड़ा चौगान (क्रीड़ा-स्थल), जवेरों तथा वन, की नहरें, छोटा दुर्ग, क्षीर सागर बड़ा दुर्ग आवरण एव महल मन्दिर शोभित हैं। पश्चिम दिशा की ओर फूलबाग, नूरबाग, दूब दुलीचा, वृक्ष पँक्ति, चौगान, रत्नखचित तटबद्ध नहरें, बन की नहरें, छोटा दुर्ग आवरण, दधिसागर और वृहद दुर्ग आवरण जहाँ असंख्य सच्चिदानन्द-मयी शोभा वाले महल हैं, दृष्टिगोचर होते हैं। वायव्य कोण की ओर वृहद्वन, मधुवन, महावन, जवेरों की नहरें, आगे वन की नहरें, छोटा दुर्ग, घृत-सागर, बड़े दुर्ग के महल मन्दिर के उदोय-मान हैं।

उत्तर दिशा में लाल चबूतरा ताड़ वन, मधु-वन महावन, पुष्पराज गिरि (पुखराज पहाड़), जवेरों की नहरें–बन की नहरें, लघु दुर्ग, मधुसागर और बड़ा दुर्ग आवरण है। ईशान कोण में चिदा-नन्दमयी वापी (बावड़ी), ताड़ वन, बड़ाबन, मधु वन, जवेरों की नहरें, वन की नहरें, छोटा दुर्ग दिखायी पड़ते हैं। यहाँ असंख्य पशु-पक्षी ब्रह्मस्वरूप लीला विहार का अनुभव लेते हैं। इससे आगे 'रस-सागर' और बड़ा दुर्ग आता है। इस प्रकार दशमी भूमिका से परमधाम का सम्पूर्ण शब्दातीत दृश्य देखने में आता है।

मूल मन्दिर (पुण्डरीक वेश्म) के उत्तर की ओर पुखराज पहाड़ है, जो साढ़े चार लाख कोस के अन्तर से स्थित है। इसी से श्री यमुना की धारा का प्रवाह चलता है और साढ़े चार लाख कोस पूर्व ढका खुला चलकर दक्षिण की ओर को हो जाता है और नौ लाख कोस तक खुला जाकर पश्चिम की ओर को घूम जाता है। फिर पश्चिम को साढ़े चार लाख कोस चलकर सुधारस सरोवर में जाकर समा जाता है। मूल मन्दिर के सामने पूर्व की ओर यमुना जी के दोनों तटों पर सात-सात घाट और सात-सात वन हैं जिनमें नाना प्रकार के असंख्य पुष्प, फल एवं पशु-पक्षी शोभा प्राप्त कर रहे हैं। यह सात वन केलवन, निम्बू वन, अनारवन, अमृत [आम] वन जम्बूवन, नारंगी वन और बट वन के नाम से प्रसिद्ध हैं। मूल मन्दिर से पूर्व में साढ़े चार लाख कोस के अन्तर पर अक्षर ब्रह्म का धाम है। परमधाम और अक्षर धाम के बीच यमुना जी बहती हैं जिसके दोनों तटों पर सात-सात घाट और घाटों के दाएँ-बाएँ दो पुल हैं।

मूल मन्दिर के पूर्वी दरवाजे के सामने एक विशाल चाँदनी चौक है। इसके उत्तर में लाल और दक्षिण में हरे वृक्षों से सुशोभित दो चबूतरे हैं। प्रातःकाल जब श्री राजश्यामाजी पाँचवीं

Nijanand App

भूमिका के छज्जे पर आकर विराजते हैं, तो परम-धाम के पच्चीसों पक्ष के असंख्य पशु-पक्षी इसी चाँदनी चौक में दर्शन और अभिवादन की तत्परता दिखाते हैं। अपने-अपने भाव भरे नवीन नृत्यकला आदि करके अपने पिया को प्रसन्न करते हैं। इस अद्वैत रहस्य लीला के आनन्द को ब्रह्मस्वरूप को हृदय में धारण करने वाले कोई भाग्यशाली पुरुष ही पाते हैं। इस चाँदनी चौक से सौ सीढ़ी ऊपर चढ़ने पर श्री परमधाम की प्रथम भूमिका में प्रवेश होता है।

ब्रह्मधाम के पशु-पक्षी वन-उपवन, गिरि-नदी सभी ब्रह्मस्वरूप हैं, और उनमें सामर्थ्य, ऐश्वर्य, ज्ञान, प्रकाश आनन्द देने की शक्ति, सर्वज्ञता, अनादित्व, चेतनता आदि ब्रह्म के गुण भी हैं। इसीलिए ब्रह्मधाम के वन, वृक्ष, जल-थल सभी सत्, चित्, आनन्द अनन्त अद्वैत आदि दिव्यगुण युक्त भेद रहित सदा चेतन माने गये हैं।

ब्रह्मधाम में आनन्द में सत्, चित् और आनन्द भाव, चित् में सत्, चित् और आनन्द भाव तथा सत् में सत्, चित् और आनन्द भाव पूर्णरूपेण विद्यमान हैं। एक में अनेक और अनेक में एकत्व का दर्शन हो तो अद्वैत भूमिका का महत्व है। यहाँ पर किसी भाव की न्यूनता नहीं है और सबको सर्वत्र बल, ऐश्वर्य, आनन्द, सामर्थ्य प्रकाश, सभी बातें यथेष्ट रूप में प्राप्त हैं अतः इसे पूर्णात्पूर्ण कहा गया है। जो कुछ भी किसी को कामना है तो वह परस्पर आनन्द पहुँचाने के लिए न कि अपने लिए। वहाँ अपना पराया भेद सिद्ध नहीं होता अतः वहाँ जो कुछ भी है वह लीला वैचित्र्य सिद्धि के लिए है।

ब्रह्मधाम के फूल, फल, पशु, पक्षी अथवा कोई भी पदार्थ लीला वैचित्र्य की सिद्धि के लिए है। अतः वह भोग्य तथा चिद् भाव के कारण वह ब्रह्मानन्द का भोक्ता भी है। आनन्द भाव की पूर्णता से वह स्वयं भी आनन्दित होता है और परस्पर दूसरों को भी आनन्दित करता है। सद्भाव की विशेषता से दिव्य शोभा पूर्ण अनादि विराजमान रहता है और परस्पर दूसरों को भी शोभित बनाता रहता है। चिद्भाव द्वारा प्रकाश पूर्ण, सर्वज्ञ और सबकी अनुकूलता को धारण किये है। आनन्द के द्वारा सबको सुखदायी, आकर्षक, परस्पर अद्वैत आनन्द को उपबृंहण रहा है।

सद्भाव के कारण लीलामय होते हुए भी सदा सर्वदा, एकरस, एकरूप, सनातन अखण्ड विद्यमान है। ब्रह्मधाम के प्रत्येक पदार्थ में अनन्त गुण, अनन्त प्रकाश, अनन्त भाव, अनन्त लीलामय रूप, अनेक में एक और एक में अनेक भावों का उदय प्रतिक्षण होता रहता है। यह शब्दों और मनवाणी से परे होने के कारण सही-सही स्पष्ट नहीं किया जा सकता।

जिस ब्रह्मधाम के परमाणु के समक्ष इस विश्व के करोड़ों सूर्यों का प्रकाश निस्तेज हो जाता है, जहाँ के एक रज कण की शोभा यहाँ के स्वर्ग बैकुण्ठ के करोड़ों सौन्दर्य नहीं पा सकते, जिस ब्रह्मानन्द के क्षण मात्र के आनन्द के समक्ष स्वर्ग बैकुण्ठ के असंख्य आनन्द, सुख एकत्रित किए जावें तो भी तुच्छ प्रतीत हों, उस ब्रह्मानन्द का वर्णन और अनुभव यहां पर यथार्थ हो नहीं पाता है।

Nijanand App